

प्रवासी भारतीय (Indian Diaspora)

भाग- 2

भारत से प्रवास एक पुरानी परिघटना है। उपनिवेश-पूर्व व्यापारिक समुदायों ने दक्षिण पूर्व और मध्य एशिया में कुछ अस्थायी और कुछ स्थायी बस्तियाँ स्थापित कीं। औपनिवेशिक काल के दौरान, 1830 के दशक से लेकर 20वीं सदी के प्रारंभ तक, भारतीयों के बड़े समूहों को दुनिया भर में फैले अन्य ब्रिटिश, फ्रांसीसी और डच उपनिवेशों में काम करने के लिए गिरमिटिया मज़दूरों के रूप में भर्ती किया गया था - विशेष रूप से अफ्रीका, कैरिबियन और दक्षिण पूर्व एशिया और प्रशांत क्षेत्र में। इसके अतिरिक्त, इस अवधि में, अन्य प्रकार के प्रवासी भी थे - व्यापार और वाणिज्य में, लेकिन सैनिक, क्लर्क, शिक्षक और अन्य विविध व्यवसायों में लगे लोग भी, जो उन गंतव्य देशों की औपनिवेशिक सरकारों में सेवा की तलाश में थे। स्वतंत्रता के बाद, प्रवास की कई लहरें आईं। उच्च शिक्षा के लिए पश्चिम जाने वाले छात्र और बेहतर आर्थिक अवसरों की तलाश में पेशेवर लोग एक विशिष्ट समूह बनाते हैं। तेल उछाल के बाद 1970 के दशक से खाड़ी देशों में बड़ी संख्या में प्रवासी आए, जिनमें से अधिकांश कुशल और अकुशल, दोनों तरह के श्रमिक थे, जिनमें कुछ अनुपात उच्च योग्यता प्राप्त पेशेवर भी थे। वास्तव में, खाड़ी प्रवासी विदेशों में रहने वाले भारतीयों का सबसे बड़ा हिस्सा हैं। उन्नत औद्योगिक देशों में प्रवासियों की सबसे हालिया लहर में आईटी पेशेवर शामिल हैं, जो आईटी कौशल के व्यापक स्पेक्ट्रम को शामिल करते हैं।

औपनिवेशिक काल से ही, प्रवासियों के बारे में जानकारी व्यवस्थित रूप से एकत्र की जाने लगी थी और एक अकादमिक क्षेत्र के लिए बीज बोए गए थे। औपनिवेशिक सरकार की अपनी प्रजा के प्रवास की प्रक्रिया पर नियंत्रण रखने की मजबूरी और कुछ प्रकार की सूचनाओं की उसकी प्रशासनिक और राजनीतिक आवश्यकता ने आँकड़े एकत्र करने और आँकड़ों व रिपोर्टों के संकलन को प्रेरित किया। ये सामग्रियाँ इतिहासकारों के लिए 19वीं और 20वीं शताब्दी के आरंभ में विदेशी प्रवास का मानचित्रण और विश्लेषण करने के लिए एक उपजाऊ स्रोत बनीं। इन सभी अध्ययनों में, प्रवासियों के लिए प्रयुक्त शब्द 'प्रवासी भारतीय' है और स्वतंत्रता के बाद के शुरुआती वर्षों में अध्ययनों में यह परंपरा जारी रही।

भारतीय प्रवासी अध्ययन के दृष्टिकोण का विकास

भारतीय डायस्पोरा अध्ययन के क्षेत्र में विकास को स्पष्ट रूप से दो चरणों में विभाजित किया जा सकता है: 1990 के दशक से पहले और बाद में। जाहिर है कि प्रत्येक चरण के भीतर भी सूक्ष्म विविधताएं और विभाजन हैं, लेकिन प्रमुख परिवर्तन 1990 के दशक की शुरुआत में भारतीय परिदृश्य में तीन प्रमुख घटनाओं के संयोजन से हुआ: वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजीकरण, जिसके कारण नौजोक्स (2009: 4) भारत के अपने प्रवासियों के साथ संबंधों में एक प्रतिमान बदलाव कहते हैं और साथ ही, और यह महत्वपूर्ण है, संबंधों को समझने के सहवर्ती तरीकों में भी। इससे पहले, उस नाम का कोई अकादमिक क्षेत्र नहीं था, हालांकि प्रवासी भारतीय समुदायों पर अच्छी तरह से शोध किए गए लेख थे। परिवर्तन की कहानी पर कई मंचों पर बात की गई है और इसके बारे में लिखा गया है। औपनिवेशिक काल के दौरान, भारत में राष्ट्रीय आंदोलन ने प्रवासी भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की खराब कार्य-स्थिति और जीवन-यापन की स्थिति के मुद्दे को बड़े ज़ोरदार तरीके से उठाया। यह ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध अभियान का एक हिस्सा था। प्रवासियों का अपनी मातृभूमि के साथ गहरा भावनात्मक रिश्ता भी था। भारत की स्वतंत्रता के बाद, सरकार और जनता का रवैया, दोनों ही बदल गए। नेहरू का प्रसिद्ध आह्वान वस्तुतः यह था, 'अब जब आपने वहाँ रहने का निर्णय ले लिया है, तो आपको अपनी गोद ली हुई भूमि के लिए अपना

पूरा ज़ोर लगाना होगा और वहाँ की मूल आबादी के साथ घुलना-मिलना होगा।'

नव-स्वतंत्र भारत राष्ट्रों के समुदाय में अपना स्थान तलाशने का प्रयास कर रहा था। गुटनिरपेक्ष आंदोलन के नेता के रूप में इसकी भूमिका यह भी निर्धारित करती थी कि वह अन्य देशों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करे, इसलिए इसने इन देशों में भारतीय मूल की आबादी का मामला नहीं उठाया। 1960 के दशक में, जब पूर्वी अफ्रीका में रहने वाली अधिकांश गुजराती भारतीय आबादी को ईदी अमीन की शत्रुतापूर्ण नीतियों के कारण वहाँ से जाना पड़ा, तब प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी का भी यही दृष्टिकोण था। 1960 और 70 के दशक में पश्चिम की ओर पलायन करने वाले छात्रों और पेशेवरों के मामले में, एक आम धारणा थी कि पलायन करके उन्होंने अपनी मातृभूमि के साथ विश्वासघात किया है, जिसके परिणामस्वरूप 'प्रतिभा पलायन' हुआ। खाड़ी देशों में जाने वाले प्रवासियों के मामले में, वे अधिकांशतः श्रमिक वर्ग के थे और अस्थायी आधार पर कार्यरत थे। उनकी स्थिति लोकप्रिय चर्चा में प्रमुख नहीं थी। कुल मिलाकर, स्वतंत्रता के बाद, प्रवासी समुदाय की लोकप्रिय जागरूकता और सार्वजनिक चर्चा में कोई महत्वपूर्ण उपस्थिति नहीं थी। बाद के समय में अर्थात औपनिवेशिक काल के विघटन के बाद के नउस समय ने भी इस प्रतिमान को स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित किया।

शेष अगले भाग में.....